3

यजुर्वेद और सामवेद संहिता साहित्य

इस पाठ में यजुर्वेदीय संहिता साहित्य और सामवेदीय संहिता साहित्य की आलोचना की गई है। यजुर्वेद शुक्ल और कृष्ण भेद से दो प्रकार का होता है। उनका पुन संहिता भेद भी है। यहाँ उनमें आदि यजुर्वेद संहिता का सामान्य से परिचय करके माध्यन्दिन संहिता, काण्व संहिता, तैत्तिरीय संहिता, मैत्रायणी संहिता, कठ संहिता, और कापिष्ठल संहिता इत्यादि इनके विभागों की विस्तार से आलोचना करेगें। उसके बाद सामवेद संहिता की आलोचना करेंगे। और वहाँ साम शब्द के अर्थ का प्रतिपादन करेंगे। उसके बाद कौथुमीय शाखा, राणायणीय शाखा, और जैमिनीय शाखा इन तीनों का सामवेदीय शाखाओं में विस्तार से आलोचना होगी। और अन्त में सामगान का सामान्य परिचय और साम विभाग को प्रदर्शित करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- यजुर्वेद के विभागों को जान पाने में;
- यजुर्वेदीय संहिताओं के प्रकारों को जान पाने में;
- माध्यन्दिन संहिता, काण्व संहिता, तैत्तिरीय संहिता, मैत्रायणी संहिता, कठ संहिता, कापिष्ठल संहिता -इन मुख्य संहिता के विषय में जान पाने में;
- साम-शब्द का अर्थ समझ पाने में;
- सामवेदीय संहिता के प्रकारों को समझ पाने में;
- कौथुमीय शाखा, राणायनीय शाखा और जैमिनीय शाखा इन तीन सामवेदीय शाखा को जान पाने में और;
- सामगान के सामान्य परिचय को और साम विभाग को जान पाने में।

टिप्पणियाँ

3.1 यजुर्वेद संहिता साहित्य

ऋग्वेद संहिता, सामवेद संहिता, यजुर्वेद संहिता और अथर्ववेद संहिता इन चारो संहिता में भी यजु संहिता अत्यधिक महत्त्व पूर्ण है। यजुर्वेद में सभी प्रकार के यागों के वर्णन प्राप्त होते हैं। और वह यजु संहिता कृष्ण यजुर्वेद तथा शुक्ल यजुर्वेद भेद से दो प्रकार के हैं। मन्त्र, ब्राह्मण दोनों का जहाँ मिश्रित भाव प्राप्त होता है वह कृष्ण यजुर्वेद इस नाम से विख्यात है, किन्तु जहाँ मन्त्रों का ही विशुद्ध रूप के द्वारा प्रतिष्ठान किया है वह शुक्ल यजुर्वेद इस नाम से विख्यात है। शुक्ल यजुर्वेद की पच्चासी शाखाओं में केवल चार तैत्तिरीय, मैत्रायणी, काठक, कापिष्ठल नाम की शाखा उपलब्ध होती है।

यजुर्वेद में गद्य है। अध्वर्यु के द्वारा यज्ञ में उपयोग में लाने वाले मन्त्र ही यजुर्वेद में सङ्कलित हैं। यज्ञ का वास्तविक विधान अध्वर्यु ही करता है, इसलिए यह यजुर्वेद यज्ञ विधि के अत्यधिक समीपता के सम्बन्ध की रक्षा करता है। यजु शब्द की व्याख्या समय-समय के अनुसार अलग-अलग प्रतीत होती है परन्तु फिर भी उनमें एक ही लक्षण के प्रति सङ्केत प्राप्त होते हैं। 'अनियताक्षरावसानो यजुः' अर्थात् जहाँ अक्षरो की संख्या निश्चित नहीं होती है वह यजुर्वेद है। 'गद्यात्मको यजुः' अथवा 'शेषे यजुः' इस कथन का यह ही तात्पर्य है कि गद्यात्मक-मन्त्रों का अभिधान ही 'यजुर्वेद' में है।

वेद के दो सम्प्रदाय है - १) ब्रह्म सम्प्रदाय, २) और आदित्य सम्प्रदाय है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार आदित्य यजु-शुक्ल यजुर्वेद के नाम से प्रसिद्ध है, और भी याज्ञवल्क्य आख्यान में - 'आदित्यानीमानि शुक्लानि यजूंषि वाजसनेयेन याज्ञवल्क्येनाख्यायन्ते' (श.ब्रा. १४/९/५/३३)। इस कारण आदित्य सम्प्रदाय का प्रतिनिधि शुक्ल यजुर्वेद है। यजुर्वेद के शुक्लत्व और कृष्णत्व का जो भेद है, वह उसके स्वरूप पर आश्रित है। शुक्ल यजुर्वेद में दर्शपौर्ण मास आदि के अनुष्ठान के लिये मन्त्र सङ्कलित हैं। किन्तु वहाँ ब्राह्मण भाग का अलग से निर्देश है। कृष्ण यजुर्वेद में तो मन्त्रों के साथ ही उसके नियोजक ब्राह्मण वाक्यों का सम्मिश्रण है। मन्त्र और ब्राह्मण का एक ही जगह मिश्रण ही कृष्ण यजुर्वेद के कृष्णत्व का कारण है। और इसी प्रकार मन्त्र, ब्राह्मण के पृथकत्व का शुक्ल यजुर्वेद के शुक्लत्व का कारण है।

3.2 विषय विवेचन

शुक्ल यजुर्वेदीय मन्त्र संहिता वाजसनेयी संहिता इस नाम से विख्यात है। इसमें चालीस अध्याय है। उनमें अन्तिम पंद्रह अध्याय खिल रूप से प्रसिद्ध अर्वाचीन मानते है।

प्रारम्भिक दो अध्याय दर्शपौर्ण मास नामक याग के सम्बद्ध मन्त्रों का वर्णन है। तृतीय अध्याय में अग्निहोत्र के लिये और चातुर्मास्य यज्ञ के लिए उपयोगी मन्त्रों का विवरण किया है। चौथे अध्याय से आरम्भ करके आठवें अध्याय पर्यन्त सोम याग का वर्णन है। इसी अध्याय में अग्निष्टोम के प्रकृति याग का विस्तृत विवरण है। अग्निष्टोम में सोम का उपखण्ड से पीस करके रस निकालना चाहिए। उससे ही प्रातः, मध्याह्न, और सायंकाल अग्नि में हवन होता है। इसी को ही 'सवन' इस नाम से जाना जाता है। यह सवन समय के अनुसार से विभिन्न नामों से विख्यात है। दिन मात्र

में ही समाप्त सवन को 'एकाह:' कहते है। सोमयाग में वाजपेय याग सबसे श्रेष्ठ है। राजा के अभिषेक के समय में राजसूय यज्ञ होता है। इस यज्ञ में द्यूतक्रीडा, अस्त्रक्रीडा आदि का राजा के अन्य उचित विभिन्न क्रियाकलापों का विधान होता है। नौवें और दसवें अध्याय में इसी यज्ञ से ही सम्बद्ध मन्त्रों का सङ्कलन है। उसके बाद ग्यारहवें अध्याय से आरम्भ करके अठारहवें अध्याय पर्यन्त अग्नि चयन विषय में आलोचना है। किन्तु यज्ञ की होम अग्नि हेतु के लिये वेदी निर्माण का वर्णन भी विस्तार से किया है। वेदि की रचना १०८०० ईटों से होता है। यह विशिष्ट स्थान से भी समान होती है। वेदि की आकृति पंख फैलाये पक्षी के समान होती है। ब्राह्मण मन्त्रों में वेदि तथा उसके ईटों का आध्यात्मिक रूप से व्याख्यान बहुत सुन्दरता से किया है। सोलहवें अध्याय में सौ रुद्र यज्ञ का प्रसङ्ग है। इस अध्याय में रुद्र की कल्पना के लिये वेद वेदागों सहित विवेचना की है। रुद्र सम्बन्धी वैदिक यज्ञो में रुद्राध्याय अत्यधिक उपयोगी और हमेशा प्रसिद्ध है। अठारहवें अध्याय में वसु के धारा सम्बन्धी मन्त्रों का निर्देश है। उसके बाद तीन अध्यायों में (१९-२१) सौत्रामणि यज्ञ का विधान है। इस यज्ञ के विषय में एक जनश्रुति है की अधिक सोमपान से इन्द्र रोगी हुए। इस रोग की चिकित्सा स्वर वैद्य ने इसी यज्ञ से की है। राज्य से हटे हुए राजा के लिये, पशुकाम की इच्छा वाले यजमान के लिए, सोमरस अनुकुलता से पराजित मनुष्य के लिए इस यज्ञ का अनुष्ठान किया जाता है। इसकी प्रक्रिया का संक्षिप्त विवरण उन्नीसवें अध्याय के महीधर भाष्य के प्रारम्भ में प्राप्त होती है। सौत्रामणि यज्ञ में सोमरस के साथ सुरापान का भी विधान है। जैसा की ''सौत्रामण्यां सुरां पिबेत्" इति।

बाईसवें अध्याय से आरम्भ करके पच्चीसवें अध्याय तक अश्वमेध यज्ञ के विशिष्ट मन्त्रों का निर्देश है। अश्वमेध यज्ञ तो सार्वभौम के स्वामी की अभिलाषा से सम्राट करते थे। इस यज्ञ का वेद- वेदांगो सहित वर्णन शतपथ ब्राह्मण के तेरहवें काण्ड में और कात्यायन श्रौतसूत्र के बीसवें अध्याय में है। छबीसवें अध्याय से आरम्भ करके उनत्तिसवें अध्याय पर्यन्त सम्पूर्ण मन्त्रों का सङ्कलन किया है। तीसवें अध्याय में पुरुषमेध यज्ञ का वर्णन है। जहाँ एक सौ चौरासी पदार्थों के आलम्भन का (बलिदान का) निर्देश किया है। भारत वर्ष में कभी भी पुरुषमेध नहीं हुआ। यह काल्पनिक यज्ञ है। इस अध्याय में उस समय के समाज की अवस्था का ज्ञान प्राप्त होता है, तथा कला कौशल का परिचय प्राप्त होता है। इकत्तीसवें अध्याय में प्रसिद्ध पुरुष सूक्त है, जिसमें ऋग्वेद की अपेक्षा से छ: मन्त्र अधिक है। बत्तीसवें तथा तैंतीसवें अध्याय में सर्वमेध के मन्त्रों का उल्लेख मिलता है। बत्तीसवें अध्याय के आरम्भ में हिरण्यगर्भ सूक्त के भी कुछ मन्त्र उद्धृत है। चौंतिसवें अध्याय के प्रारम्भ में छ: विशिष्ट मन्त्र 'शिवसङ्कल्प सूक्त के है' (तन्मे मन: शिवसङ्कल्पमस्तु) हमेशा उपयोगी है।

''सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्
नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं
तन्मे मन: शिवसङ्कल्पमस्तु॥'' **(यजु ३४/६)**

पैंतीसवें अध्याय में पितृमेध यज्ञ सम्बन्धि मन्त्र सङ्कलित है। छत्तिसवें अध्याय से आरम्भ करके अड़तिसवें अध्याय पर्यन्त प्रवर्ग्य याग का विस्तार से वर्णन है। अन्तिम अध्याय में ईशावास्य उपनिषद्

टिप्पणियाँ

है। उपनिषदो में छोटे आकार का यह उपनिषद् सबसे पहला उपनिषद है, क्योकि अन्य उपनिषद संहिता के भाग नहीं है। उपनिषद् ग्रन्थो में इस ग्रन्थ की प्रधानता का कारण यह ही है की इस संहिता का आदित्य के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध की भी सूचना इसके ही अन्तिम मन्त्र के द्वारा प्राप्त होती है –

''हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
योसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्॥'' इति। **(ईशावा.४०/१७)**

पाठगत प्रश्न 3.1

1. गद्यात्मक मन्त्रों का क्या अभिधान है?
2. यजुर्वेद कितने प्रकार का है?
3. वेद के कितने सम्प्रदाय है?
4. कृष्ण यजुर्वेद के नाम करण में हेतु कौन है?
5. शुक्ल यजुर्वेद में कितने अध्याय हैं?
6. अश्वमेध यज्ञ के विषय में निर्देश शुक्ल यजुर्वेद में कहाँ प्राप्त होते है?

3.3 शुक्ल यजुर्वेद की शाखा

शुक्ल यजुर्वेद की माध्यान्दिन शाखा, और काण्व शाखा ये दो शाखा हैं। प्रथम शाखा उत्तर भारत में प्राप्त होती है और दूसरी महाराष्ट्र में। दोनों शाखाओं की संहिता अलग होने पर भी उन दोनों में थोड़ा ही भेद है, और बहुत समानता है। किन्तु प्राचीन काल में काण्व शाखा उत्तर भारत में ही थी। जिसके कारण इस संहिता के एक मन्त्र में (११/११) कुरु-पाञ्चालदेशीय राजाओं का निर्देश प्राप्त होता है (एष वः कुरवो राजा, एष पाञ्चालो राजा)। महाभारत के आदिपर्व के अनुसार (६३/१८) शकुन्तला के पालन कर्ता पिता कुलपति कण्व का आश्रम मालिनी नदी के तट पर था। आज भी यह स्थान उत्तर प्रदेश के 'बिजनौर' जिले में 'मालन' नाम से विख्यात एक छोटी नदी है। इस कारण काण्व संहिता का प्राचीन सम्बन्ध उत्तर प्रदेश के साथ स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है।

3.4 कृष्ण यजुर्वेद की शाखा

कृष्ण यजुर्वेद की आजकल चार शाखा प्राप्त होती है –

(क) तैत्तिरीय संहिता- यह प्रधान शाखा है, यहाँ सात खण्ड है। और वे खण्ड अष्टक शब्द से और काण्ड शब्द से प्रयोग करते हैं। प्रत्येक काण्ड में कुछ अध्याय है जो प्रपाठक नाम से विख्यात है। ये प्रपाठक बहुत से अनुवाकों में विभक्त है।

(ख) मैत्रायणीं संहिता- ये दोनों भी संहिता में तैत्तिरीय संहिता का अनुसरण करती हैं।

(ग) काठक संहिता- केवल क्रम में यहाँ वहाँ भेद है।

(घ) कापिष्ठल संहिता- चरणव्यूह मत के अनुसार इसके विषय में वर्णन करेंगे।

3.4.1 तैत्तिरीय संहिता

तैत्तिरीय संहिता का प्रचार देश के दक्षिण भारत में है। कुछ अंश रूप में महाराष्ट्र प्रदेश और सम्पूर्ण रूप में आन्ध्र, कर्नाटक प्रदेश इस शाखा का अनुयायी है। इस संहिता के अपने ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषत्, श्रौतसूत्र, तथा गृह्यसूत्र आदि अक्षुण्ण हैं। तैत्तिरीय संहिता के परिमाण भी कम नहीं है। आचार्य सायण की यह अपनी शाखा थी। शुक्ल यजुर्वेद में वर्णित विषय के समान ही इसके विषय हैं। पौरोडाश, यजमान, वाजपेय, राजसूय, आदि अनेक यागों के अनुष्ठान का विस्तार से यहाँ पर वर्णन प्राप्त होता है। यज्ञ के मुख्य स्वरूप का निष्पादकत्व से इस संहिता का विद्वत्ता पूर्ण भाष्य को सर्वप्रथम आचार्य सायण ने लिखा है। किन्तु उनसे भी पूर्वतर भाष्य भट्टभास्कर मिश्र का (ग्यारहवी शताब्दि का) प्राप्त होता है। ज्ञानयज्ञ नाम का यह भाष्य प्रसिद्ध है। प्रमाणिक दृष्टि से अथवा विद्वत्ता की दृष्टि से किसी भी भाष्य से न्यून यह भाष्य नहीं है। यज्ञ अर्थ से अतिरिक्त आध्यात्मिक, आधिदैविक पक्षों में भी मन्त्रों के अर्थ यहाँ वहाँ किए गए हैं।

3.4.2 मैत्रायणी संहिता

कृष्ण यजुर्वेद की दूसरी शाखा मैत्रायणी है। और यह संहिता गद्य पद्यात्मक है। इस संहिता में चार काण्ड है। प्रथम काण्ड ग्यारह प्रपाठकों में विभक्त है। जिनमें क्रमशः दर्शपूर्ण मास, अध्वर, आधान, पुनराधान, चातुर्मास्य, वाजपेय आदि यज्ञो का वर्णन है। दूसरा काण्ड तेरह प्रपाठको में विभक्त है। इन प्रपाठको में काम्य, इष्टि, राजसूय, अग्निचित, आदि का विस्तृत विवरण है। तीसरे काण्ड में सोलह प्रपाठक है। जिनमें अग्निचित, अध्वरविधि, सौत्रामणी, अश्वमेध आदि का विस्तृत वर्णन है। चौथा काण्ड खिलकाण्ड के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें पहले निर्दिष्ट राजसूय आदि यज्ञों के विषय में आवश्यक वस्तुओं का बहुत बड़ा सङ्ग्रह है। सम्पूर्ण संहिता में २१४४ मन्त्र हैं, जिनमें १७०१ ऋचा प्रत्येक काण्ड में ऋग्वेद से उद्धृत की है। ये सभी मन्त्र ऋग्वेद के विभिन्न मण्डलों में प्राप्त होते हैं।

3.4.3 कठ संहिता

यजुर्वेद की सत्ताईस शाखाओं में कठ शाखा अद्वितीय है। पुराणों में काठक लोग मध्य प्रदेशीय नाम से अथवा माध्यम नाम से विख्यात थे। इससे जाना जाता है की वे प्राचीन काल में मध्यप्रदेश में रहते थे। पतञ्जलि के कथन अनुसार कठ संहिता का प्रचार तथा पठन-पाठन प्रत्येक गाँव में था ('ग्रामे ग्रामे काठकं कालापकं च प्रोच्यते'- महाभाष्य में ४/३/१०१)। इससे इस संहिता का प्राचीन काल में अत्यधिक प्रचार का बोध होता है। अब इसके अध्येताओं की संख्या बहुत कम है।

कठ संहिता में पांच खण्ड है। और वे क्रमशः इठिमिका, माध्यमिका, ओरमिका, याज्यानुवाक्या, अश्वमेधाद्यनुवचन नामों से विख्यात है। इन खण्ड के अंश का नाम स्थानक है। ये नाम वैदिक साहित्य में अन्य जगह दुर्लभ हैं। इस संहिता में स्थानक की संख्या चालीस है, अनुवचनों की संख्या तेरह है, अनुवाकों की संख्या ८४३ है, मन्त्रों की संख्या ३०९१ है, मन्त्र ब्राह्मणों की सम्पूर्ण संख्या १८००० तक है।

इठिमिका के अट्ठारह स्थानकों में पुरोडाश, अध्वर, पशुबन्ध, वाजपेय, राजसूय आदि यागों का विस्तृत वर्णन है। माध्यमिका के बारह स्थानकों में सावित्री, पञ्चचूड, स्वर्ग, दीक्षित, आयुष्य आदि का विवेचन है। ओरिमिका का दस स्थानकों में पुरोडाश ब्राह्मण, यजमान ब्राह्मण, सत्रप्रायश्चित्त, चातुर्मास, सव, सौत्रामणि आदि का वर्णन है। अन्तिम काण्ड में तेरह अनुवचन है। यहाँ दर्शपौर्णमास, अग्निष्टोम, अग्निहोत्र, आधान, काम्येष्टि, निरूढपशुबन्ध, वाजपेय, राजसूय, अग्निचयन, चातुर्मास, सौत्रामणी, अश्वमेध आदि यज्ञों का विशिष्ट विधान सहित वर्णन किया है। कृष्ण यजुर्वेद की चारों संहिताओ में केवल स्वरूप से ही एक रूपता नहीं है, अपितु उसमे वर्णित अनुष्ठानों में तथा उसके निष्पादक मन्त्रों में भी समानता है।

3.4.4 कापिष्ठल संहिता

चरणव्यूह के मत अनुसार चरक शाखा में कठों का, प्राच्य कठो का, और कपिष्ठल कठ का उल्लेख प्राप्त होते है, जिस उल्लेख से शाखा सम्बद्ध इसका पूर्ण परिचय प्राप्त होता है। कपिष्ठल किसी ऋषि विशेष का नाम था। इसका उल्लेख महावैयाकरण महर्षि पाणिनि ने 'कपिष्ठलो गोत्रे' (८/३/९१) इस सूत्र में किया है। भाष्यकार के अनुसार भी दुर्गाचार्य ने भी अपने आप को 'कपिष्ठल वसिष्ठ' ऐसा कहा है (''अहञ्च कापिष्ठलो वाशिष्ठः" निरुक्तटीका ४/४)। प्रायः यह किसी स्थान विशेष का बोध कराता था। इस संहिता के सम्पादक का अनुमान है कि - कपिष्ठल गाँव का प्रतिनिधि 'कैथल' इस नाम का ही गाँव था। यह गाँव कुरुक्षेत्र में सरस्वती नदी के पूर्व दिशा में बसा हुआ था। इस गाँव का उल्लेख काशिका में तथा वराहमिहिर के द्वारा रचित बृहत संहिता में (१४/४) प्राप्त होता है।

काठक संहिता से अनेक प्रकार की विभिन्नता और पृथकता इस कापिष्ठल संहिता में दिखाई देती है। काठक संहिता के समान इसका मूल ग्रन्थ भी स्वराङ्कन पद्धति में ऋग्वेद के समान ही है। ऋग्वेद के समान ही यह ग्रन्थ भी अष्टकों और अध्यायों में विभक्त है। इस प्रकार कापिष्ठल संहिता में ऋग्वेद का ही महान् प्रभाव दिखाई देता है। यह ग्रन्थ पूर्ण नहीं है। इस ग्रन्थ में निम्न लिखित अष्टक तथा उसके अन्तर्गत अध्याय है -

प्रथम अष्टक- सम्पूर्ण है, और आठ अध्याय से युक्त है।

द्वितीय अष्टक और तृतीय अष्टक- नौवें अध्याय से आरम्भ करके चौबीसवें अध्याय पर्यन्त द्वितीय तृतीय दोनों अष्टक।

चतुर्थ अष्टक- बत्तीसवें अध्याय को छोड़कर पच्चीसवें अध्याय से आरम्भ इकत्तिसवें अध्याय तक सभी अध्याय प्राप्त होते हैं।

पञ्चम अष्टक- तैतीसवें अध्याय को छोड़कर बतीसवे अध्याय से आरम्भ करके अन्य सात अध्याय प्राप्त होते है।

षष्ठ अष्टक- तैंतालीस अध्याय को छोड़कर अन्य सभी अध्याय प्राप्त होते है। अड़तालीस अध्यायों में यह ग्रन्थ सम्पूर्ण होता है। तुलनात्मक दृष्टि से यह अपूर्ण ग्रन्थ अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

पाठगत प्रश्न 3.2

1. शुक्ल यजुर्वेद की कितनी शाखा हैं?
2. कृष्ण यजुर्वेद की कितनी शाखा प्राप्त होती हैं?
3. माध्यान्दिन शाखा कहाँ प्राप्त होती है?
4. काण्व शाखा कहाँ प्राप्त होती है?
5. मैत्रायणी संहिता में कितने काण्ड है?

3.5 सामवेद संहिता साहित्य

चारों संहिताओ में साम संहिता परम गौरव शालिनी है। 'सामवेद को जो जानता है, वह ही वेद तत्त्व को जानता है' यह बृहद्देवता की उक्ति उसकी महिमा को उच्च स्वर से गा रही है। गीता में भगवान् श्री कृष्ण ने कहा - वेदो में सामवेद हूँ। गान पूर्वक उपासना इस वेद का उद्देश्य है। अब इस महान वेद की तीन ही शाखा प्राप्त होती है। और वे यथाक्रम कौथुमीय, राणायनीय, और जैमिनीय है।

ऋग्वेद में और अथर्ववेद में सामवेद की बहुत प्रशंसा प्राप्त होती है। ऋग्वेद में एक मन्त्र में पक्षी की सुन्दर ध्वनि के समान साम गायन मधुर होता है ऐसा कहा है - 'उद्गातेव शकुने साम गायसि' इति (ऋ.२/४३/२)। अथर्ववेद में वेदों के स्वरूप विषय में एक जगह वर्णन किया है की जगत के नियन्ता परमेश्वर के मुख स्वरूप अथर्ववेद है, त्वचा के लोम स्वरूप सामवेद है, हृदय स्वरूप यजुर्वेद है, और प्राण स्वरूप ऋग्वेद है। जैसा कि वेद में वर्णन है -

''यस्मादृचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन्।
सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखं स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः'' इति।
(अथर्ववेद. १०/७/२०)।

अन्य मन्त्र में ऋग्वेद के साथ सामवेद का भी आविर्भाव प्रदर्शित किया है - **'ऋचः सामानि छन्दांसि.....उच्छिष्टास्तु यज्ञिरे सर्वे' (अथ.वे. ११/७/२४)।** अन्य मन्त्र में कर्म के साधनभूत ऋग्वेद की और सामवेद की स्तुति में विधान है - 'ऋचं साम यजामहे यासां कर्माणि कुर्वते' (अ.वे. ७/५४/१)। इसके अतिरिक्त सामवेद की विभिन्न अभिधान प्राचीन वैदिक साहित्य में उपलब्ध होता है, जिससे इस सामवेद की प्राचीनता पर सन्देह नहीं रहता है। ऋग्वेद में वैरूप, बृहत्, रैवत,

गायत्र, भद्र आदि साम के नाम का ज्ञान होता है। यजुर्वेद में रथन्तर, वैखानस, वामदेव्य, शाक्वर, रैवत, अभीवर्त्त आदि का उल्लेख प्राप्त होता है। ऐतरेय ब्राह्मण में नौधस, रौरय, यौधाजय, अग्निष्टोमीय आदि विशिष्ट साम के नाम का निर्देश प्राप्त होते है। इससे यह प्रतीत होता है की साम गायन प्राचीन काल से ही चला आ रहा है। ऋग्वेद के समय में भी इनका विशिष्ट गायन का अस्तित्व स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है।

3.6 साम शब्द का अर्थ

ऋक् मन्त्र सम्बद्ध गान ही वस्तुतः साम शब्द का वाच्य है। साम संहिता का सङ्कलन उद्गाता नाम के ऋत्विज ने किया है। उद्गाता ही देवता स्तुति परक मन्त्रों को आवश्यकता अनुसार विविध स्वरों से गाता है। इस कारण साम नाम का आधार भूत ऋङ्ग मन्त्र ही होते हैं ऐसा निश्चित है (ऋचि अध्यूढं साम- छा. उ. १/६/१)। और यह ऋक और साम का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध को सूचित करता है, दोनों के मध्य में दाम्पत्य भाव की भी कल्पना है। पति ने सन्तान उत्पन्न करने के लिए पत्नी का आह्वान करता हुआ कहता है - साम रूप मैं पति हूँ और तुम ऋक् रूप पत्नी हो। मैं आकाश हूँ, और तुम पृथिवी हो। इसलिए आओ। हम मिलकर प्रजा की उत्पति करते है। **'अमोऽहमस्मि सा त्वम्, सामाहमस्मि ऋक् त्वम्, द्यौरहं पृथिवी त्वम्, ताविह सम्भवावा प्रजानामजनयावहै'** (बृह. उ. ६/५/२०; अ. वे. १४/२/७ ऐ.ब्रा. ८/२७)। साम शब्द की एक बहुत ही सुन्दर निरुक्ति बृहदारण्यक उपनिषद में है - 'सा च अमश्चोति तत्साम्नः सामत्वम्' (बृह.उ. १/३/२२)। 'सा' इति शब्द का अर्थ होता है ऋक् तथा 'अम' इति शब्द का अर्थ है गान्धार आदि स्वर। अतः साम शब्द का व्युत्पत्ति प्राप्त अर्थ होता है ऋक् सम्बद्ध स्वर प्रधान गान। वैसे ही- उसके साथ सम्बन्ध अम नाम का स्वर जहाँ रहता है वह साम है। जिन ऋचाओं के ऊपर साम गान होता है, वह ऋचा वेद विद्वानों द्वारा 'सामयोनि' नाम से जानी जाती है। यहाँ स्मरण रहना चाहिए की यहाँ साम संहिता का वर्णन है। इनमे उन साम-ऋचाओं का सङ्ग्रह मात्र ही है अर्थात् साम संहिता में केवल साम उपयोगी मन्त्रों का ही सङ्कलन है, उनमें गान नहीं है जो सामवेद का मुख्य वाच्य है।

3.7 विषय विवेचना

सामवेद के दो प्रधान भाग हैं - आर्चिक और गान। आर्चिक शब्द का अर्थ ऋक्-समूह। वह भी दो भाग में विभाजित होती है - पूर्वार्चिक और उत्तरार्चिक। पूर्वार्चिक को ही छन्द, छन्दसी, और छन्दसिका तीन नामों से जाना जाता है। विषय अनुसार पूर्वार्चिक को चार भागो में विभाजित करते हैं - आग्नेय पर्व (अग्नि सम्बन्धि ऋचाओं का वर्णन), ऐन्द्र पर्व (इन्द्र सम्बन्धि ऋचाओं से युक्त), पवमान पर्व (सोम विषय), और आरण्यक है। पूर्वार्चिक में छः प्रपाठक अथवा अध्याय है। प्रत्येक प्रपाठक में दो अर्द्ध अथवा खण्ड है, तथा प्रत्येक खण्ड में पुन 'दशति' नाम के अंश है। प्रत्येक दशति नाम के खण्ड में कुछ ऋचा है। प्रथम अध्याय से आरम्भ करके पांचवे अध्याय तक की ऋचा तो 'सामगान' नाम से विख्यात है, किन्तु छठें अध्याय की ऋचा अरण्य में ही गाते हैं। अतः यहाँ इन ऋचाओं का एक ही जगह सङ्ग्रह है। इसके अन्त में परिशिष्ट रूप से 'महानाम्नी' इस नाम की दस ऋचा हैं। इस प्रकार से पूर्वार्चिक में मन्त्रों की संख्या छः सौ पचास है (६५०)।

उत्तरार्चिक तो अनुष्ठान निर्देशक है। उसके बहुत से विभाग है। दसरात्र, संवत्सर, ऐकाह, अहीन, सत्र, प्रायश्चित्त, और क्षुद्र वहाँ प्रमुख भेद है। इस उत्तरार्चिक में नौ प्रपाठक है। प्रथम पञ्च प्रपाठको में प्रत्येक प्रपाठक के दो भाग हैं, जो प्रपाठक अर्द्ध नाम से प्रसिद्ध है। किन्तु अन्तिम चार प्रपाठकों में प्रत्येक प्रपाठक के तीन भाग हैं। यह भेद राणायनीय शाखा के अनुसार है। उत्तरार्चिक के सम्पूर्ण मन्त्रों की संख्या (१२२५) बारह सौ पच्चीस है। अत: दोनों आर्चिको के मिलाने से मन्त्रों की संख्या (१८७५) अट्ठारह सौ पचहत्तर है।

पाठगत प्रश्न 3.3

1. बृहद्देवता में साम विषय में क्या कहा है?
2. श्री कृष्ण ने साम महिमा की कीर्ति का वर्णन कैसे किया?
3. साम का क्या उद्देश्य है?
4. साम की कितनी शाखा और वे कौन सी हैं?
5. किस मन्त्र में कर्म साधन भूत ऋग्वेद की और सामवेद की स्तुति विहित है?
6. ऋग्वेद में कैसे साम नाम का अभिधान प्राप्त होता है?
7. ऋक् साम नाम की तुलना है।
8. सामयोनि कौन है?
9. आर्चिक का शाब्दिक अर्थ क्या है?
10. पूर्वार्चिक को किन नाम से व्यवहार किया जाता है?
11. पवमान पर्व का क्या विषय है?

3.8 सामवेद की शाखा

भागवत, विष्णु, वायु आदि पुराणों के मतानुसार वेदव्यास महोदय ने अपने शिष्य जैमिनि के लिए सामवेद की शिक्षा दी। कवि जैमिनि ही सामवेद के आदि आचार्य के रूप से सभी जगह प्रसिद्ध है। जैमिनि ने अपने पुत्र सुमन्तु को, सुमन्तु ने अपने पुत्र सुन्वान् को, सुन्वान् ने अपने पुत्र सुकर्मण को सामवेद संहिता का अध्ययन कराया है। इस संहिता का विपुल प्रचार के लिये वेदाचार्य सुकर्मण का बहुत बड़ा योगदान है। इसके दो पट्टशिष्य थे – हिरण्यनाभकौशल्य, और पौष्यञ्जि, जिनसे सामवेद की दो प्रकार की धारा प्रकट हुई। प्राचि और उदीचि। प्रश्नोपनिषद में (६/१) हिरण्यनाभ का कौशल देश के राज पुत्र रूप से चित्रित है। भागवत पुराण में (१२/६/७८) साम गान की दोनों परम्परा का उल्लेख है – प्राच्य साम गान और उदीच्य साम गान। भौगोलिक भिन्नता के

टिप्पणियाँ

कारण ही यहाँ नामकरण की भिन्नता है। हिरण्यनाभ के शिष्य का नाम कृत था। वह पौरव वंशीय राजा सन्नतिमान्-महोदय का पुत्र था। उसने साम संहिता का अपने शिष्यों द्वारा चौबीस प्रकार का प्रवर्त्तन किया। इसका वर्णन मत्स्य पुराण में (४९/७५-७६), हरिवंश पुराण में (२०/४१-४४), विष्णु पुराण में (४/१९-५०), वायु पुराण में (४१/४४), ब्रह्माण्ड पुराण में (३५/४९-५०) तथा भागवत पुराण में (१२६/८०) सामान्य रूप से प्राप्त होता है। वायु पुराण में और ब्रह्माण्ड पुराण में कृत-महोदय के चौबीस शिष्यों के नाम का भी वर्णन प्राप्त होता है। कृत महोदय के अनुयायियो में सामाचार्य और कार्त्तनाम के प्रसिद्ध विद्वान थे। जैसे -

''चतुर्विंशतिधा येन प्रोक्ता वै सामसंहिताः।
स्मृतास्ते सामगाः प्राच्याः कार्त्ता नाम्नेह सामगाः॥'' इति॥

इस कृत महोदय के लोगाक्षि, माङ्गलि, कुल्य, कुसीद, कुक्षि नाम के पांच शिष्यो का उल्लेख श्रीमद्भागवत में (१२/६/७९) प्राप्त होता है। पौराणिकों के मत अनुसार से सामवेद की हजार शाखा है। इसका समर्थन पतञ्जलि ने भी किया है - 'सहस्रवर्मा सामवेदः' इति। मूल रूप से यह गान प्रधान सामवेद है। जैमिनि गृह्यसूत्र आदि की (जै.गृ.१/१४) पर्यालोचना से सामवेद की तेरह शाखाओं का उल्लेख प्राप्त होता है। सामतर्पण के अवसर पर इन शाखाओं के आचार्यो के नाम का उच्चारण करते है। वैसे ही राणायण, सात्यमुग्रि, व्यास, भागुरि, औलुण्डि, गौल्मुलवि, भानु, मानौपन्यव, काराटि, मशक, गार्ग्य, वार्षगण्यकौथुमी, शालिहोत्र जैमिनि ये तेरह सामगान आचार्य तर्पितो का कल्याण करो। अब सामवेद की तीन शाखा प्राप्त होती है - कौथुमीय, राणायनीय, और जैमिनीय।

3.8.1 कौथुमीय शाखा

यह संहिता अत्यधिक लोकप्रिय है। इसकी ताण्ड्य नाम की शाखा भी प्राप्त होती है। जिसका विशिष्ट प्रभाव और प्रचार प्राचीन काल में था। आचार्य शङ्कर ने अपने वेदान्त भाष्य के अनेक स्थलो में इसकी चर्चा की। यह चर्चा इसके गौरव को और महत्त्व को सूचित करता है। पच्चीस काण्ड का विशालकाय ताण्ड्य ब्राह्मण ग्रन्थ इसकी ही शाखा है। सुप्रसिद्ध छान्दोग्य उपनिषद् का भी इस शाखा के साथ सम्बद्ध है, ऐसा भगवान् शङ्कराचार्य अपने भाष्य में स्पष्ट लिखते है। वैसे - ''यथा ताण्डिनामुपनिषदि षष्ठे प्रपाठके स आत्मा'' इति (शा. भा. ३/३/३६), ''स आत्मा. ...छान्दोग्य उपनिषद्'' इति (६८/७) तथा ''अन्येऽपि शाखिनः ताण्डिनः शाट्यायिनः'' इति (शा. भा. ३/४/२७)।

3.8.2 राणायनीय शाखा

यह संहिता कौथुमीय शाखा से किसी भी प्रकार भिन्न नहीं है। मन्त्र गणना की दृष्टि से लगभग दोनों शाखा समान है। केवल उच्चारण जहाँ कही पर भिन्नता प्राप्त होती है। कौथुमीय लोग जहाँ 'हाड' तथा 'राइ' इन पदों का उच्चारण करते है वहाँ राणायनीय लोग 'हाबु' तथा 'रायी' इन पदों का उच्चारण करते हैं। राणायनीयों में सात्यमुग्रि इस नाम की एक अवान्तर शाखा है, जिसके उच्चारण की विशेषता भाषाविज्ञान की दृष्टि से नितान्त आलोचनीय है। आपिशली शिक्षा द्वारा

तथा महाभाष्य कार ने स्पष्टता से निर्देशित किया है कि सात्यमुग्रि लोग एकार का और ओकार के स्थान में ह्रस्व उच्चारण करते है। जैसा कि कहा है –

''छन्दोगानां सात्यमुग्रिराणायनीया ह्रस्वानि पठन्ति।'' इति। (आपिशलीशिक्षा)
''ननु च भोश्छन्दोगानां सात्यमुग्रिराणायनीया अर्धमेकारं.....अर्धमोकारं च अधीयते। सुजाते ए अश्वसूनृते। अध्वर्वो ओ अद्रिभिः सुतम्'' (महाभाष्यम्-१/१/४/४८)।

3.8.3 जैमिनीय शाखा

इस शाखा का सम्पूर्ण अंश ब्राह्मण, श्रौत, गृह्यसूत्र, संहिता प्राप्त होती है। जैमिनीय संहिता देवनागरी लिपि में लाहौर नगर से प्रकाशित हुई। इसके मन्त्रों की संख्या १६८७ है। तवलकार शाखा इसी की ही अवान्तर शाखा है। यह तवलकार जैमिनि महोदय का पट्टशिष्य था। यह सामगान पूर्वार्चिक से सम्बद्धित है। इसके तीन भाग हैं – आग्नेय, ऐन्द्र, और पवमान। इनमें आदि का और अन्तिम का पर्व का विशेष विभाग नहीं है, किन्तु ऐन्द्र पर्व के चारों भाग हैं। सम्पूर्ण ग्रन्थ में गान संख्या १२२४ है। कौथुमीय साम संहिता से जैमिनीय साम संहिता के पाठ में सर्वथा भेद नहीं है, किन्तु गान प्रकार सर्वथा भिन्न ही है। आज तक इस शाखा का केवल प्रथम भाग ही प्रकाशित है। द्वितीय भाग का तो हस्तलेख मात्र है।

पाठगत प्रश्न 3.4

1. सामवेद की शिक्षा किसने किसको दी?
2. जैमिनि का पुत्र कौन है?
3. प्रश्न उपनिषद् में कौशल देश के राजपुत्र के रूप में कौन चित्रित है?
4. कृत महोदय के कितने शिष्य हैं?
5. राणायणीय में एक अवान्तर शाखा कौन सी है?
6. एकार के और ओकार के स्थान में ह्रस्व उच्चारण कौन करते है?

3.9 साम गान का सामान्य परिचय

इन सामयोनि मन्त्रों को आश्रित करके ऋषियों के द्वारा गान-मन्त्रों की रचना की है। (गान चार प्रकार का होता है – १. गेयगान (प्रकृति गान) २. आरण्यक गान ३. ऊह गान ४. ऊह्य गान (रहस्य गान)। पूर्वार्चिक के प्रथम पांच अध्याय में आये मन्त्रों का पाठ गान गाँव में होता है। आरण्यक पर्व में निर्दिष्ट मन्त्रों का पाठ गान आरण्यक में होता है। ऊहगान और ऊह्यगान उत्तरार्चिक में उल्लेखित मन्त्रों का पाठ मुख्य रूप से गुप्त होता है। विभिन्न शाखा में इनके मन्त्रों की संख्या भी विभिन्न ही होती है। सबसे अधिक गान जैमिनीय शाखा में ही उपलब्ध है।

गान	कौथुमीय शाखा	जैमिनीय शाखा
गाँव का गान	११९७	१२३२
आरण्यक गान	२९४	२९१
ऊह गान	१०२६	१८०२
ऊह्य गान	२०५	३५६
सभी का सङ्कलन	२७२२	३६८७

भारतीय सङ्गीत शास्त्र के मूल में यह साम गान ही है। साम गान पद्धति का रहस्य ज्ञान आज भी वैसा ही कठिन है जैसा भारतीय सङ्गीत शास्त्र का ज्ञान रहस्य है। नारदीय शिक्षा के अनुसार सामवेद का स्वर मण्डल इस प्रकार है –

सामानि		वेणवः (स्वर)
१.	प्रथम	मध्यम। मा
२.	द्वितीय	गान्धार। गा
३.	तृतीय	ऋषभ। रे
४.	चतुर्थ	षड्ज। सा
५.	पञ्चम	निषाद। नि
६.	षष्ठ	धैवत। धा
७.	सप्तम	पञ्चम। पा

सामगान में ये ही सात अङ्क उन स्वरों के स्वरूप को सूचित करते है। सामगानो में सामयोनि मन्त्रों का परिवर्तन करने पर अनेक प्रकार के सङ्गीत अनुकूल परिवर्त्तन होते है। और ये परिवर्त्तन सामविकार कहलाते हैं। सामविकार तो संख्या में छः होते हैं।

१. **विकार**– शब्द का परिवर्त्तन। 'अग्नेः' इस पद के स्थान में 'आग्नयि' इस पद का प्रयोग।

२. **विश्लेषण**– एक पद का पृथक् करण। जैसे 'तये' इस पद के स्थान में 'तोयितीया २यि' इस पद का प्रयोग।

३. **विकर्षण**– एक स्वर का लम्बे समय तक विभिन्न प्रकार का उच्चारण। जैसे 'ये' इस पद का 'या २ ३ यि' इस प्रकार उच्चारण करना।

४. **अभ्यास**– किसी भी पद का बार बार उच्चारण करना। जैसे – 'तोयायि' पद का दो बार उच्चारण।

५. **विराम**– आराम के लिए किसी भी पद के मध्य में विराम। जैसे – 'गृणानि हव्यदातये' यहाँ पर हकार के उपर विराम।

६. **स्तोम**– 'औहोवा' 'हाउवा' इत्यादि गान के अनुकूल पद। ये विकार भाषा शास्त्र की दृष्टि में भी हमेशा माननीय है।

3.10 साम विभाग

सामगान की पद्धति अत्यधिक कठिन है। उसके यथार्थ ज्ञान के लिए सूक्ष्म अध्ययन की आवश्यकता है। सामान्य रूप से सामगान के पांच विभाग हैं।

१. **प्रस्ताव**– मन्त्र का यह प्रारम्भिक भाग होता है। 'हूँ'– इस शब्द से प्रारम्भ होता है। प्रस्तोता (ऋत्विक्) इसका गान करता है।

२. **उद्गीथ**– साम का प्रधान (ऋत्विक्) उद्गाता इसका गान करता है। इसका आरम्भ 'ऊँ'–शब्द से होता है।

३. **प्रतीहार**– प्रतीहार शब्द का अर्थ सङ्कलन कर्त्ता है, प्रतिहर्त्ता नाम का ऋत्विक् इसका गान करता है।

४. **उपद्रव**– जो उद्गाता गाता है वह ही उपद्रव है।

५. **निधन**– प्रस्तोता, उद्गाता, प्रतिहर्त्ता ये तीनो मिलकर के इसका गान करते है। उदाहरण के लिये सामवेद का यह प्रथम मन्त्र–

'अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये। निहोता सत्सि वर्हिषि।' इति।
अस्य मन्त्रस्योपरि यस्य साम्नः गानं भविष्यति तस्य निम्नलिखितानि पञ्च अङ्गानि भवन्ति–

१. हुँ ओग्नाई (प्रस्ताव)।

२. ओम् आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये (उद्गीथ)।

३. नि होता सत्सि वर्हिषि ओम् (प्रतिहार)। इस प्रतिहार के भी दो भेद है।

४. नि होता सत्सिव (उपद्रव)।

५. र्हिषि ओम् (निधन)।

इस साम का जब तीन बार गान होता है तब वह स्तोम कहलाता है। सामगायन के लिए किसी स्वर का विकार और परिवर्तन करना होता है। जैसे पूर्व मन्त्र का 'अग्न' इस पद के गायन में परिवर्त्तित रूप– 'ओग्नाई' इस प्रकार का होता है। गायन में स्वर पूर्ति के लिए जब कभी भी निरर्थक पदों का सङ्कलन होता है। जैसे – औ, हौ, वा, हा इत्यादि। ये स्तोम होते है। छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार सात प्रकार का साम होता है। जैसे – १ हिङ्कार, २ प्रस्ताव, ३ आदि,

४ उद्गीथ, ५ प्रतिहार, ६ उपद्रव, ७ और निधन। उपर निर्देशों का पांच प्रकार साम के ही अवान्तर भेद करने से सात प्रकार साम की उत्पति होती है।

पाठगत प्रश्न 3.5

1. चार प्रकार के गान कौन कौन से हैं?
2. विकार कौन हैं?
3. विश्लेषण क्या है?
4. विकर्षण क्या है?
5. अभ्यास क्या है?
6. स्तोम क्या है?
7. प्रस्ताव क्या है?
8. उपद्रव क्या है?

पाठ का सार

इस पाठ में यजुर्वेद सामवेद संहिता साहित्य की आलोचना की है। शुक्ल और कृष्ण भेद से भी यजुर्वेद के दोनों भागों की यहाँ आलोचना की है। उनको पुनः संहिता भेद भी प्रदर्शित किया है। यहाँ सबसे पहले यजुर्वेद संहिता का सामान्य परिचय कराकर काण्व संहिता, तैत्तिरीय संहिता, मैत्रायणी संहिता, कठ संहिता, और कापिष्ठल संहिता इन मुख्य संहिता का यहाँ विस्तार से आलोचना की है। उसके बाद सामवेद संहिता की व्याख्या की। और साम शब्द का अर्थ भी प्रतिपादित किया। उसके बाद कौथुमीय शाखा, राणायनीय शाखा, और जैमिनीय शाखा इन तीनों सामवेद की शाखाओं की व्याख्या की। और अन्त में सामगान का सामान्य परिचय और सामविभाग प्रदर्शित किया है।

पाठांत प्रश्न

1. काण्व संहिता विषय पर टिप्पणी लिखिए।
2. तैत्तिरीय संहिता विषय पर छोटा निबंध लिखिए।
3. मैत्रायणी संहिता विषय पर टिप्पणी लिखिए।
4. कापिष्ठल संहिता विषय पर छोटा निबन्ध लिखिए।

5. साम शब्द के अर्थ का विस्तार से निबन्ध लिखिए।
6. कौथुमीय शाखा विषय पर टिप्पणी लिखिए।
7. राणायनीय शाखा विषय पर छोटा निबन्ध लिखिए।
8. जैमिनीय शाखा विषय पर टिप्पणी लिखिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

3.1

1. यजु।
2. दो प्रकार का।
3. १ ब्रह्म सम्प्रदाय, २ और आदित्य सम्प्रदाय दो सम्प्रदाय हैं।
4. मन्त्र और ब्राह्मण भाग का एक ही जगह मिश्रण कृष्ण यजुर्वेद के कृष्णत्व का कारण है।
5. चालीस।
6. बाईसवे अध्याय से आरम्भ करके पच्चीसवे अध्याय तक अश्वमेध यज्ञ के विशिष्ट मन्त्रों का निर्देश है।

3.2

1. शुक्ल यजुर्वेद की माध्यन्दिन शाखा और काण्व शाखा दो शाखा है।
2. कृष्ण यजुर्वेद की अभी चार शाखा प्राप्त होती है।
3. उत्तर भारत में प्राप्त होती है।
4. काण्व शाखा महाराष्ट्र में।
5. चार काण्ड है।

3.3

1. ''साम को जो जानता है वही वेद को जानता है''।
2. 'वेदों में सामवेद हूँ' इति।
3. गान पूर्वक परमात्मा की उपासना।
4. तीन-कौथुमीय, राणायनीय, और जैमिनीय।
5. ''ऋचं साम यजामहे याभ्यां कर्माणि कृण्वते'' इति (अथर्ववेद: ७/५४/१)।

टिप्पणियाँ

6. ऋग्वेद में वैरूप, बृहत्, रैवत, गायत्र, भद्र आदि साम के नामो का ज्ञान प्राप्त होता है।
7. मैं साम रूप में पति हूँ और तुम ऋक् रूप में पत्नी हो।
8. जिन साम ऋचाओं पर सामगान होता है वह ऋचाए वेद विद्वानों द्वारा 'सामयोनि' नाम से जानी जाती है।
9. ऋग्वेद का समूह।
10. छन्द, छन्दसी और छन्दसिका।
11. सोम विषयक।

3.4

1. वेदव्यास महोदय ने अपने शिष्य जैमिनी के लिए।
2. सुमन्तु।
3. हिरण्यनाभ।
4. २४।
5. सात्यमुग्रि।
6. सात्यमुग्रि मनुष्यों के द्वारा।

3.5

1. १ गेयगान (प्रकृति गानम्), २ आरण्यक गान ३ ऊहगान, ४ और ऊह्यगान (रहस्य गान)।
2. शब्द का परिवर्त्तन। 'अग्नेः' इस पद के स्थान में 'आग्नायि' इस पद का प्रयोग।
3. एक पद को अलग करना। जैसे 'तये' इस पद के स्थान में 'तोयितीया २यि' इति।
4. एक स्वर का दीर्घकाल तक अनेक प्रकार से उच्चारण करना। जैसे 'ये' इस पद का 'या २ ३ यि' इस प्रकार उच्चारण करना।
5. किसी भी पद का बार-बार उच्चारण करना। जैसे - 'तोयारि' पद का दो बार उच्चारण करना।
6. आराम के लिए किसी भी पद के मध्य में विराम लगाना। जैसे - 'गृणानि हव्यदातये' इस पद में हकार के उपर विराम है।
7. मन्त्र का प्रारम्भिक भाग प्रस्ताव है।
8. जो उद्गाता गाता है वह ही उपद्रव है।

॥ तीसरा पाठ समाप्त॥